पं. अटल बिहारी वाजपेयी की सांस्कृतिक मान्यताएँ

डॉ. संगीता कुमारी*

सारांश :–प्रस्तुत लेख के तहत पं. अटल बिहारी वाजपेयी की सांस्कृतिक मान्यताओं का अध्ययन सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से किया गया है। किसी भी व्यक्ति के जीवन में उसके परिवार की धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं का गहरा प्रभाव पड़ता है। उनका जन्म एक परंपरावादी वैदिक सनातन धर्मावलंबी कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था, जहाँ प्राचीन मान्यताओं आस्थाओं और विश्वास का बोलबाला था। जहाँ की मान्यता थी, भारतीय संस्कृति उस सनातन धर्म की अडिग शिलाखण्ड पर खड़ी है, जो शाश्वत, सनातन और अपौरुषेय है। यह धर्म सदा सनातन एवं चिरंतन है। यह अपने आप में समग्र और अविभाज्य है। परिणाम स्वरूप भारतीय संस्कृति भी अपने आप में समग्र और परिपूर्ण है। पं. अटलजी की सांस्कृतिक मान्यताएँ देश प्रेम एवं सांस्कृतिक जीवन दर्शन आदि से प्रभावित रही है।

मुख्य बिन्दु : –पं. अटलजी की सांस्कृतिक मान्यताएँ, संस्कृति क्या है?, जनसंघ एवं भाजपा की सांस्कृतिक मान्यताएँ, राष्ट्रीयता एवं संस्कृति, सभ्यता एवं संस्कृति परस्पर संबंध, हिन्दू संस्कृति का वर्तमान स्वरूप

उद्देश्य :–पं. अटल बिहारी वाजपेयी की सांस्कृतिक मान्यताओं का अध्ययन किया गया है। पं. अटल बिहारी वाजपेयी की सांस्कृतिक मान्यताएँ का भारतीय राजनीति पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन पद्धति :–प्रस्तुत अध्ययन के लिए ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है। इसके सामग्री का संकलन प्रत्यक्ष सर्वेक्षण, साक्षात्कार, पत्र–पत्रिका, समाचर पत्र, घोषणा पत्र, विभिन्न बेवसाइट एवं पुस्तक के माध्यम से किया गया है।

परिचय :–'संस्कृति' स्वयं एक भाववाचक संज्ञा है। जिसकी पहचान होती है, उसमें पैदा हुए एवं जीवन व्यतीत करते हुए लोगों की जीवन मूल्यों से, जो उनके जीवनशैली का निर्माण करते हैं। संस्कार, संस्कृति और स्वराष्ट्र ये तीनों मानव मात्र के लिए सूक्ष्म, गूढ़ एवं अदृश्य सत्ता है। संस्कार अपने मौलिक रूप में नैसर्गिक आत्म अनुशासन है। मानव की समस्त सत् प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होकर विकसित हो सके इसके लिए संस्कार अपरिहार्य माना गया है। संस्कार धर्ममूलक है और उससे उत्पन्न संस्कृति भी धर्म पर आधारित है। इस अर्थ में एक संस्कृत समाज का

***सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग श्यामनन्दन सहाय महाविद्यालय, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफरपुर।**

विकसित एवं विशाल स्वरूप ही 'राष्ट्र' है। राष्ट्र निर्मित नहीं होता। यह कोटि–कोटि संस्कृत लोगों की चेतना और प्रेरणा का विराट स्वरूप होता है। यही कारण है कि विश्व में अलग–अलग राष्ट्र है। सबकी अलग–अलग प्रकृति एवं पहचान है। राष्ट्र की आत्मा वहाँ निवास करने वाले लोगों की अन्तरात्मा में बैठी संस्कृति होती है। सजीव संस्कृति ही राष्ट्र की आत्मा होती है।

पं० अटल की सांस्कृतिक मान्यताएँ :–किसी भी व्यक्ति के जीवन पर उसके परिवार की धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं का गहरा प्रभाव पड़ता है। उनका जन्म एक परंपरावादी वैदिक सनातन धर्मावलंबी कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनका जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ था, जहाँ प्राचीन भारतीय मान्यताओं, आस्थाओं और विश्वास का बोलबाला था। उनके प्रपितामह एवं पितामह दोनों ही संस्कृत के प्रख्यात विद्वान एवं पंडित थे। उनके पिता. पं. कृष्ण बिहारी वाजपेयी की हिन्दी भाषा पर गहरी पकड़ थी। शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए, उन्होंने हिन्दी, संस्कृत, और अंग्रेजी भाषा में दक्षता प्राप्त कर ली थी। ऐसे परिवार में जन्म लेने के कारण पं. अटलजी को अनेक भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा और भारतीय संस्कृति का वृहत् ज्ञान प्राप्त हुआ।[1]

संस्कृति क्या है? :–'संस्कृति' शब्द 'सम्' उपसर्ग तथा 'कृ' धातु के साथ 'क्तिन्' प्रत्यय से बना है। शब्द की व्युत्पत्ति की दृष्टि से संस्कृति शब्द का अर्थ लिया जाय, तो इसका अर्थ होता है, वह कृति जो सुसंस्कारित हो चुका है अर्थात् प्राकृत रूप में अनगढ़ कृति को सम्यक् बना देने पर ही कृति संस्कारित होती है। अवगुणों का परिमार्जन कर सद्गुणों का अभिवर्द्धन ही संस्कार है।[2] इसी संस्कार शब्द से संस्कृति बनी है।

भारतीय संस्कृति उस सनातन धर्म की अडिग शिलाखंड पर खड़ी है, जो शाश्वत, सनातन और अपौरुषेय है। यह धर्म सदा सनातन एवं चिरंतन है। यह अपने आप में समग्र और अविभाज्य है। परिणामस्वरूप भारतीय संस्कृति भी अपने–आप में समग्र और परिपूर्ण है। पुराने काल में संस्कार और शिक्षा साथ–साथ चलते थे। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति गुरुकुल आश्रमों में संचालित होती थी। वहाँ पूर्ण समानता होती थी। यह समानता सच्ची होती थी, जो संस्कारों पर आधारित होता था।[3]

इस संदर्भ में एक प्रश्न संस्कृति की मूल चेतना से संबद्ध है। भारतीय संस्कृति की मूल चेतना क्या है? क्योंकि बिना मूल चेतना के बाह्याकृति शाश्वत नहीं हो सकती। इसे स्पष्ट करते हुए महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा, 'हमारी मूल चेतना वैदिक है। वेद अपौरुषेय है, ज्ञान और तप की भावभूमि पर हमने प्रकृति को जानने का प्रयास किया। प्रकृति ने जड़ता में चैतन्य की सृष्टि की है। हम उसकी वाणी को समझने में समर्थ हुए। प्रकृति के विधान से ही संस्कार की सृष्टि हुयी। इस

प्रकार विकसित संस्कृति वैदिककाल से आजतक मूल रूप में हमारे जीवन में मुखरित होता रहा है। इसी से हम जीवन के गूढ़ रहस्यों को समझने में सफल हुए। मौलिक सुख–सुविधा के साथ पारलौकिक ज्ञान की प्राप्ति का प्रयास किया। इहलौकिक एवं पारलौकिक चिन्तन के समन्वय से हमें आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर चिरंतन संस्कृति के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ।' अर्थात् अध्यात्म ही हमारी संस्कृति की मूल चेतना है। इसी वैदिक संस्कृति के आधार पर विश्व संस्कृति का निर्माण किया गया।[4]

भारत एक राष्ट्र के रूप में अडिग स्तंभों पर खड़ा है। संस्कृति इसका मूल आधार है। जबतक यह संस्कृति कायम है, भारत एक राष्ट्र के रूप में कायम रहेगा और इसे कोई समाप्त नहीं कर सकता। इस अर्थ में राष्ट्रीयता और संस्कृति के मध्य अटूट संबंध है। राज्य के साथ राष्ट्रीयता को नहीं जोड़ा जाना चाहिए। राज्य बनते हैं, अतीत में लुप्त हो जाते हैं, लेकिन राष्ट्रीयता शाश्वत है। यह संस्कृति पर आधारित होता है। जबकि संस्कृति का अस्तित्व अक्षुण्ण बना हुआ है, राष्ट्रीयता कायम रहेगी। भारतीय राष्ट्रीयता इन्हीं कारणों से आज भी कायम है और वह कायम रहेगा।

जनसंघ एवं भाजपा की सांस्कृतिक मान्यताएँ :–जनसंघ पार्टी द्वारा घोषित सिद्धांतों के अंतर्गत इसकी सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुसार ''लोकतंत्र, समानता, राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं विश्व शांति परस्पर संबद्ध कल्पनाएँ हैं। भारत का सांस्कृतिक चिन्तन वह तात्विक अधिष्ठान प्रस्तुत करता है, जिससे उपर्युक्त भावनाएँ समन्वित हो, वांछनीय लक्ष्यों की सिद्धि कर सके। इस अधिष्ठान के अभाव में मानव चिन्तन और विकास अवरुद्ध हो गया है। भारतीय तात्विक सत्यों का ज्ञान देश और काल से स्वतंत्र है। यह ज्ञान केवल हमारी ही नहीं, वरण पूर्ण संसार की प्रगति की दिशा निश्चित करेगी।''[5]

जनसंघ की मान्यता है कि भारतीय संस्कृति एकात्मवादी है। यह सृष्टि की विभिन्न सत्ताओं एवं जीवन के विभिन्न अंगों के मध्य भिन्नता को स्वीकार करते हुए उनमें एकता की खोज कर समन्वय स्थापित करने की बात कही गयी है। यह एकांगी न होकर सर्वांगीण है। इसका दृष्टिकोण साम्प्रदायिक न होकर सर्वात्मवादी एवं सर्वोत्कर्षवादी है। एकात्मकता इसका मूल आधार है।

अपनी इस सांस्कृतिक मान्यता को भारतीय जनसंघ पार्टी द्वारा चुनाव घोषणा पत्र 1951 में सम्मिलित किया कि अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है। विभिन्न लोगों की जीवनशैली अलग–अलग रही है। लेकिन भारतीय संस्कृति में उनका समन्वय हुआ है। इसकी धारा वैदिक काल से अबतक अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित होती रही है। समय–समय पर यह विभिन्न जातियों एवं संस्कृति के सम्पर्क में अवश्य आया है, लेकिन इसने उन सबकों अपने में

आत्मसात कर लिया है। भारतीय संस्कृति एक एवं अखण्ड है। मिली–जुली संस्कृति की चर्चा राष्ट्रीय एकता को क्षीण कर विघटनात्मक प्रवृतियों को पुष्ट करता है। यह भारतीय संस्कृति के आधार पर राष्ट्रवाद का समर्थक है।[6]

1996 के लोकसभा चुनाव के भाजपा के घोषणा–पत्र में हिन्दुत्व एवं सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के प्रति प्रतिबद्धता दुहरायी गयी कि ''भारतीय जनता पार्टी, एक राष्ट्र, एक जन एवं एक संस्कृति के प्रति वचनबद्ध हैं एवं यह दल प्रतिस्पर्द्धात्मक साम्प्रदायिकता को समाप्त करने का प्रयास करेगा और साम्प्रदायिकता के प्रति तुष्टिकरण की नीति का अंत करेगा।''[7]

पं० अटलजी की सांस्कृतिक मान्यताएँ 'देश–प्रेम' एवं सांस्कृतिक जीवन–दर्शन आदि से प्रभावित रही है। इनसे संबंधित कविताएँ उन्हें बाल्यकाल से ही आकर्षित करती रही है। तुलसीकृत 'रामचरितमानस' तो उनकी प्रेरणा का स्रोत रहा है, क्योंकि इसमें जीवन की समग्रता का वर्णन जिस रूप में तुलसीदास ने किया है, वह विश्व–साहित्य में कहीं देखने को नहीं मिलता।[8]

राष्ट्रीयता एवं संस्कृति :–पं० अटलजी राष्ट्रीय संस्कृति के समर्थक रहे हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि कोई भी राष्ट्र कुछ जनसमूहों अथवा साम्प्रदायों का समुच्चय मात्र नहीं होता है। इसे अलग–अलग कर नहीं, बल्कि इसकी समग्रता में देखा जाना चाहिए। हर राष्ट्र का अपना निजी व्यक्तित्व एवं निजी पहचान होता है। इसके विभिन्न घटक होते हैं। इसके घटकों में राष्ट्रीयता की भावना, मातृभूमि के प्रति भक्ति और उसकी संस्कृति में गौरव के भाव प्रकट होते हैं।

जहाँ तक भारत का प्रश्न है, यह एक प्राचीन राज्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति से एक नवीन राष्ट्र का जन्म नहीं हुआ, बल्कि इसके दीर्घकालीन इतिहास में एक नवीन अध्याय का श्रीगणेश हुआ। भारत के ऋषियों–मुनियों, पुराण–निर्माताओं, कवि–कलाकारों ने एकात्म जीवन की नींव रखी थी। इस राष्ट्र का मूल स्वरूप राजनीतिक नहीं सांस्कृतिक है। 'सांस्कृतिक एकता ही राजनैतिक एकता की प्रेरक शक्ति रही है। राजनीतिक एकता के अभाव में सांस्कृतिक एकता अक्षुण्ण रही है।'[9]

भारत एक राष्ट्रीय जीवन विविधताओं से परिपूर्ण है। यहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती है, विभिन्न प्रकार की कला एवं साहित्य की शैलियाँ विद्यमान हैं, यहाँ अनेकों धर्म एवं सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। ये विविधताएँ हमारे राष्ट्रीय जीवन की समृद्धि के परिचायक हैं। एकता का अर्थ एकरूपता नहीं होता है। हमें विविधताओं में एकता की खोज करनी है और उसे सुदृढ़ बनाना है। उपासना पद्धति की स्वतंत्रता भारतीय संस्कृति का अंग है। भारतीय संविधान भी इस प्रकार की स्वतंत्रता की गारंटी प्रदान करता है। यहाँ किसी धर्म के साथ भेदभाव नहीं है और न ही इस प्रकार का भेदभाव भविष्य में करने की इच्छा है। उपासना पद्धति के आधार पर अल्पसंख्यक या बहुसंख्यक की कल्पना अतर्कसंगत ही नहीं, राष्ट्रीय

एकता के लिए घातक है। भारत में रहने वाले मुसलमान या ईसाई बाहरी नहीं हैं। उनके रगों में हिन्दू का रक्त ही प्रवाहित होता है। मजहब बदलने से राष्ट्रीयता या संस्कृति नहीं बदलती है। संस्कृत का संबंध मिट्टी और राष्ट्रीयता का नाता निष्ठा से होता है।[10]

सभ्यता एवं संस्कृति में पारस्परिक संबंध :– सभ्यता को हम साधारणतः शिष्टाचार के अर्थ में लेते हैं, इसके विपरीत संस्कृति मानसिक प्रवृत्ति है। दिनकर ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में संस्कृति एवं सभ्यता का अंतर बताते हुए कहा, 'सभ्यता वह चीज है, जो हमारे पास है, संस्कृति वह गुण है, जो हममें व्याप्त है। संस्कृति और सभ्यता में विरोध नहीं साहचर्य है।

सभ्यता और संस्कृति के पारस्परिक संबंधों को पं० अटलजी ने सूक्ष्म रूप में अंतर को स्पष्ट करते हुए कहा, 'सभ्यता में संस्कृति समाहित नहीं होता है, सभ्यता उसका बाह्य स्वरूप होता है और संस्कृति उसकी आत्मा होती है। समय के साथ सभ्यता परिवर्तित होती है, क्योंकि उसका संबंध भौतिक जीवन से होता है। भौतिक जीवन से संबंधित होने के कारण समय के साथ सभ्यता परिवर्तित होती रहती है। संस्कृति तुलनात्मक रूप से स्थायी होता है। संस्कृति मुख्य रूप से आंतरिक जगत से जुड़ी होने के कारण अधिक स्थायी होता है। संस्कृति के नष्ट होने का अर्थ होता है, जीवन मूल्यों का नष्ट होना।' कुछ विद्वान एवं विचारक सभ्यता शब्द का उपयोग वृहत अर्थ में कर संस्कृति को भी उसी में समाहित मानते हैं। लेकिन भारतीय परिवेश में यह बात नहीं कही जानी चाहिए। क्योंकि भारत में सभ्यता और संस्कृति में भेद किया जाता रहा है। सभ्यता वह है जो दृश्य है। संस्कृति वह है, जो अनुभव की जाती है।[11]

उन्होंने स्पष्ट किया कि 'मानव सभ्यता और मानव संस्कृति एक है, किन्तु उनके अलग–अलग स्तर हैं। स्तर के निर्धारण की कसौटियाँ भिन्न हैं। प्राचीन भारत में आत्मा के लिए सम्पूर्ण सर्वस्व का त्याग करने का आह्वान किया गया था। इसी को 'परमसुख' कहा जाता था, किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि भौतिकता की उपेक्षा की गयी थी। केवल किसी संस्कृति का टिका रहना ही काफी नहीं है। वह संस्कृति विकासमान होना चाहिए, वर्द्धमान होना चाहिए। भारतीय संस्कृति चिरपुरातन और चिरनूतन है। उसका प्रवाह निरंतर भी है और चिरन्तर भी।[12]

हिन्दू संस्कृति का वर्तमान स्वरूप :–पं० अटलजी ने यह स्वीकार किया कि हिन्दू संस्कृति नवीन चुनौतियों का सामना कर रही है। आज कर्मकांड पर जोर नहीं है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं होता है कि कर्मकांड के साथ धर्म भी समाप्त हो रहा है। धर्म से हमारी धारणा है। भारत की यह विशेषता रही है, मतान्तर के बाजवूद मूल तत्व को सामने रखा गया है। हिन्दू धर्म में एक मान्यता कायम रहा है कि अर्थ उपार्जन का एक हिस्सा धर्म कार्य पर खर्च होना चाहिए। ये मूल्य हर जगह देखने को मिलता है, लेकिन जिसमें मूल्य अधिक होते हैं, उसमें स्थायित्व होता है।

उन्होंने 22 मार्च, 1998 को राष्ट्र को संबोधित करते हुए कहा था, ''हमारी सभ्यता प्राचीन है। यह समन्वय पर आधारित है। यह समझाने–बुझाने पर जोड़ देती है, केवल सहन करने पर नहीं। इसका निर्माण सभी उपासना पद्धतियों के प्रति गहरे एवं सक्रिय आदर के आधार पर हुआ है। हमारे ऋषियों ने भी कहा है–''आकाशात् पतितं तोयं, यद् गच्छति सागरं। सर्वदेवं नमस्कारं, केशवं प्रतिगच्छति।''[13]

निष्कर्ष :– पं. अटलजी की सांस्कृतिक मान्यता लोकतंत्र, समानता, राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं विश्व शांति के उद्घोष के साथ परस्पर समानता के आधार पर संबंध की कामना करता है। भारत का सांस्कृतिक चिन्तन वह तात्त्विक अधिष्ठान प्रस्तुत करता है जिसमें भारतीय तात्त्विक सत्यों का ज्ञान देश और काल से स्वतंत्र है। यह ज्ञान केवल हमारी ही नही, वरन सम्पूर्ण संसार की प्रगति की दिशा निश्चित करेगी। सहिष्णुता भारतीय संस्कृति का एक आवश्यक तत्त्व एवं गुण है। संस्कृति का अर्थ है–संस्कार का समुच्चय।

संदर्भ–सूची :

1. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, अटलजी के पचहत्तर पड़ाव, भारतीय प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2001, पृष्ठ–73
2. डा० नर्मदेश्वर ओझा, राष्ट्रीयता सांस्कृतिक अवधारणा (संस्कृत प्रसार परिषद्, 1999), पृष्ठ–63
3. वही
4. वही
5. भारतीय जनसंघ घोषणाएँ व प्रस्ताव 1951–1972 (भारतीय जनसंघ, फरवरी, 1973), पृष्ठ–4–5
6. भारतीय जनसंघ, घोषणापत्र, 2 अक्टूबर, 1951, पृष्ठ–43–45
7. भारतीय जनता पार्टी, एलेक्सन मेनिफेस्टो, 1996, पृष्ठ–5–7
8. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, अटल बिहारी वाजपेयी : न दैनयं न पालायनम् (किताबघर, नई दिल्ली, 2000), पृष्ठ–80
9. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, अटल बिहारी वाजपेयी : कुछ लेखन, कुछ भाषण किताबघर, नई दिल्ली, 1999, पृष्ठ–15–16
10. भारतीय जनसंघ के प्रतिनिधि सभा अधिवेशन इन्दौर में 7–8 सितम्बर 1968 को अध्यक्षतीय भाषाण, वही, पृष्ठ–148
11. पांचजन्य (जागृति अंक) 6 नवम्बर, 1988
12. अटल बिहारी वाजपेयी, राजनीति की रपटीली राहें, किताब घर, नई दिल्ली, पृष्ठ–53
13. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, अटल बिहारी वाजपेयी, विचार बिन्दु, किताबघर, नई दिल्ली, 2000, पृष्ठ–80

****